

मिथ्यात्व को नशाया, निज तत्त्व को प्रकाशा ।
 आपा-पराया-भासा, हो भानु के समानी ॥१॥
 षट् द्रव्य को बताया, स्याद्वाद को जताया ।
 भवफन्द से छुड़ाया, सच्चि जिनेन्द्र वाणी ॥२॥
 रिपु चार मेरे मग में, जंजीर डाले पग में ।
 ठाड़े हैं मोक्ष-मग में, तकरार मोसों ठानी ॥३॥
 दे ज्ञान मुझको माता, इस जग से तोड़ूँ नाता ।
 होवे 'सुदर्शन' साता, नहीं जग में तेरी सानी ॥४॥

(८)

नित पीज्यो धी धारी, जिनवाणी सुधा-सम जानिके।टेक॥
 वीर मुखारविंदतैं प्रकटी, जन्म-जरा भयटारी ।
 गौतमादि गुरु-उर घट व्यापी, परम सुरुचि करतारी ॥१॥
 सलिल समान कलिल मल गंजन, बुधमन रंजन हारी ।
 भंजन विभ्रम धूलि प्रभंजन, मिथ्या जलद निवारी ॥२॥
 कल्याणक तरु उपवन धरिनी, तरनी भवजल तारी ।
 बंधविदारन पैनी छैनी, मुक्ति-नसैनी सारी ॥३॥
 स्व-परस्वरूप प्रकाशन को यह, भानुकला अविकारी ।
 मुनिमन कुमुदिनि-मोदन शशिभा, शमसुख सुमन सुवारी ॥४॥
 जाके सेवत बेवत निजपद, नसत अविद्या सारी ।
 तीन लोकपति पूजत जाको, जान त्रिजग-हितकारी ॥५॥
 कोटि जीभ सों महिमा जाकी, कहि न सके पविधारी^१ ।
 'दौल' अल्पमति केम कहै यह, अधम-उधारन हारी ॥६॥

(९)

साँची तो गंगा यह वीतरागवाणी ।
 अविच्छिन्न धारा निजधर्म की कहानी ॥टेक॥

१. इन्द्र

जामें अति ही विमल अगाध ज्ञानपानी ।
 जहाँ नहीं संशयादि पंक की निशानी ॥१॥
 सप्तभंग जहँ तरंग उछलत सुखदानी ।
 संतचित मरालवृन्द रमैं नित्य ज्ञानी ॥२॥
 जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्राणी ।
 'भागचन्द' निहचैँ घटमाहिं या प्रमानी ॥३॥

(१०)

धन्य-धन्य है घड़ी आज की, जिनधुनि श्रवणपरी ।
 तत्त्वप्रतीत भई अब मेरे, मिथ्यादृष्टि टरी ॥टेक॥
 जड़ तैं भिन्न लखी चिन्मूरत, चेतन स्वरस भरी ।
 अहंकार ममकार बुद्धि पुनि, पर में सब परिहरी ॥१॥
 पाप-पुण्य विधि बन्ध अवस्था, भासी अति दुःखभरी ।
 वीतराग-विज्ञानभावमय, परनति अति विस्तरी ॥२॥
 चाह दाह विनसी बरसी पुनि, समता मेघ झरी ।
 बाढ़ी प्रीति निराकुल पद सों, 'भागचन्द' हमरी ॥३॥

(११)

केवलि-कन्ये, वाङ्मय गंगे, जगदम्बे, अघ नाश हमारे ।
 सत्य-स्वरूपे, मंगलरूपे, मन-मन्दिर में तिष्ठ हमारे ॥टेक॥
 जम्बूस्वामी गौतम-गणधर, हुए सुधर्मा पुत्र तुम्हारे ।
 जगतैं स्वयं पार ह्वै करके, दे उपदेश बहुत जन तारे ॥१॥
 कुन्दकुन्द, अकलंकदेव अरु, विद्यानन्दि आदि मुनि सारे ।
 तव कुल-कुमुद चन्द्रमा ये शुभ, शिक्षामृत दे स्वर्ग सिधारे ॥२॥
 तूने उत्तम तत्त्व प्रकाशे, जग के भ्रम सब क्षय कर डारे ।
 तेरी ज्योति निरख लज्जावश, रवि-शशि छिपते नित्य विचारे ॥३॥